बाइबल अध्ययन III

व्यावहारिक बाइबल अध्ययन III: पाठ्यक्रम

टिप्पणियाँ -

कक्षा #१:

I. पाठ्यक्रम का परिचय जारी।
II. मलाकी की पृष्ठभूमि और रूपरेखा।
III. खण्ड #१: मलाकी १:१-५।

कक्षा #२:

III. खण्ड #१: (जारी।)
IV. खण्ड #२: मलाकी १:६-१४।

कक्षा #३:

IV. खण्ड #२: (जारी।)

कक्षा #४:

IV. खण्ड #२: (जारी।)
V. खण्ड #३: मलाकी २:१-९।

कक्षा #५:

V. खण्ड #३: (जारी।)
VI. खण्ड #४: मलाकी २:१०-१६।
परीक्षा।

टिप्पणियाँ -

व्यावहारिक बाइबल अध्ययन III: परीक्षा

"आगमनात्मक बाइबल अध्ययन" पाठ्यक्रमों में अन्य पाठ्यक्रमों के समान परीक्षा नहीं होती है। परीक्षा के समय का उपयोग वास्तव में आगमनात्मक बाइबल अध्ययन करने के लिए किया जाता है।

इस दूसरे "व्यावहारिक बाइबल अध्ययन" पाठ्यक्रम में, परीक्षा अवलोकन करने पर ध्यान केंद्रित करना जारी रखती है, और व्याख्यात्मक प्रश्नों तथा अनुप्रयोगों की भी आवश्यकता होती है। छात्र को बाइबल से एक गद्यांश दिया जाता है और वह उस परीक्षा के समय का उपयोग उस भाग का अध्ययन करने और अवलोकन और प्रश्न बनाने के लिए करेगा। छात्र को अपने चार सबसे महत्वपूर्ण अवलोकन और व्याख्यात्मक प्रश्न जमा करने होते हैं। अवलोकन/प्रश्न के जोड़ों में से दो में एक व्याख्यात्मक उत्तर सम्मिलित होना चाहिए, तथा उन दो में से एक में आवेदन भी शामिल होना चाहिए। अवलोकनों और प्रश्नों को महत्व, अंतर्दृष्टि, स्पष्टता आदि के अनुसार अंक दिया जाता है।

बाइबल अध्ययन III

पाठ्यक्रम परिचय:

पूर्व आवश्यक पाठ्यक्रम:

बाइबल अध्ययन; व्यावहारिक बाइबल अध्ययन I का परिचय।

यह व्यावहारिक बाइबल अध्ययन श्रृंखला का तीसरा पाठ्यक्रम है जो कि बाइबल अध्ययन पाठ्यक्रम के परिचय का अनुसरण करता है। श्रृंखला उन सामग्रियों की समझ पर आधारित है जिन्हें परिचय पाठ्यक्रम में पढ़ाया गया था।

हम मलाकी की पुस्तक का अध्ययन करने के लिए बाइबल अध्ययन की अपनी अधिक उन्नत समझ का उपयोग करेंगे। फिलिप्पियों के पाठ्यक्रम में पहले ही हम उन सब चीजों का अभ्यास कर चुके हैं जो हमने "परिचय" पाठ्यक्रम में सीखा। अब हम चाहते हैं कि अभ्यास जारी रखें और विवेचनात्मक बाइबल अध्ययन करने की अपनी योग्यता को आगे बढ़ाएं।

इस बिंदु पर "बाइबल अध्ययन का परिचय" नामक पाठ्यक्रम के परिचय की समीक्षा करना सहायक हो सकता है।

इस पाठ्यक्रम का प्रारूप।

हम मलाकी १:१-२:१६ का अध्ययन करेंगे। इसमें चार खण्ड होंगे:

१) शीषक और तैयारी (१:१-५)।
२) याजकों का पाप (१:६-१४)।
३) याजकों का अनुशासन और न्याय (२:१-९)।
४) लोगों की अविश्वासयोग्यता और कपट (२:१०-१६)।

प्रत्येक खण्ड में अध्ययन के तीन क्षेत्र होंगे:

१) संरचना का अध्ययन (इसमें वह प्रक्रिया सम्मिलित होगी जो हमें अवलोकन से व्याख्या और उसे अनुप्रयोग करने की ओर ले जाती है)।

हम इस पाठ्यक्रम में व्याख्या पर ध्यान केंद्रित करेंगे और अपने व्याख्यात्मक प्रश्नों के उत्तर देने हेतु मलाकी की पुस्तक से बाहर जाने के लिए (पिछले पाठ्यक्रमों की तुलना में) अधिक स्वतंत्रता प्रदान देंगे। हम इस खण्ड को प्रारूपित करने के तरीके में भी कम संरचित होंगे (पिछले पाठ्यक्रमों की तुलना में)।

हम इस खण्ड में वचन का अध्ययन (जब आवश्यक हो) करेंगे।

(अगले पृष्ठ पर जारी)

टिप्पणियाँ -

टिप्पणियाँ -

२) संरचना की रूपरेखा (हम प्रत्येक खण्ड में भागों के बीच संबंधों के प्रवाह को संक्षेप में प्रस्तुत करेंगे)।

३) एक निष्कर्ष (इसमें शामिल होंगे: अंतिम बिन्दु और विचार; गद्यांश का एक वाक्य सारांश विवरण; और तीन या चार शब्द का शीर्षक सम्मिलित होगा जो गद्यांश का ध्यान आकर्षित करता है)।

*** ध्यान दें: हम अपने अध्ययन में न्यू अमेरिकन स्टैंडर्ड बाइबल का उपयोग करेंगे।

II. मलाकी की सामान्य रूपरेखा और पृष्ठभूमि।

क. परीक्षा मलाकी की सामान्य रूपरेखा।

इस पाठ्यक्रम और "व्यवहारिक बाइबल अध्ययन ४" के खण्डों को व्यवस्थित करने के लिए निम्नलिखित रूपरेखा का इस्तेमाल किया गया है:

१. शीर्षक व तैयारियां (मलाकी १:१-५)।

२. इस्राएल की अविश्वासयोग्यता और कपट को फटकारा गया (मलाकी १:६-२:१६)।

१) याजकों की अविश्वासयोग्यता और कपट (मलाकी १:६-२:९)।

२) याजकों के पाप (मलाकी १:६-१४)।

३) याजकों के अनुशासन तथा न्याय (मलाकी २:१-९)।

ख. लोगों की अविश्वासयोग्यता और कपट (मलाकी २:१०-१६)।

३. परमेश्वर के आगमन की घोषणा (मलाकी २:१७-४:६)।

क. उसके आगमन का उद्देश्य: शुद्ध करने के लिए (मलाकी २:१७-३:६)।

ख. उसके आने पर उचित प्रतिक्रिया: मन फिराना (मलाकी ३:७-४:३)।

ग. आधिकारिक घोषणा (मलाकी ४:४-६)।

टिप्पणियाँ -

ख. मलाकी की पुस्तक की पृष्ठभूमि।

१. परिस्थिति से सम्बन्धित पृष्ठभूमि।

क. मलाकी की पुस्तक परमेश्वर के उस प्रेम को प्रगट करती है जो वह अपने लोगों से करता है, भले ही उन्होंने उसे स्वीकार करने या उसके प्रति प्रतिक्रिया देने से इनकार कर दिया हो।

ख. इस्राएलियों के जीवन में कठिन समय आने के कारण वे परमेश्वर से दूर हो गये। उनकी मुख्य समस्याएं निराशाएं और अधीरता थी। <u>अपेक्षाएं और वास्तविकता दो अलग अलग बातें थीं।</u>

१) जैसे ही निर्वासन का समय समाप्त हुआ, इस्राएल के लोग उस मसीह की खोज करने लगे जिसके सम्बन्ध में पूर्व भविष्यद्वक्ताओं ने भविष्यद्वाणियां की थीं।

क) वहां की ज़मीन उपजाऊ होगी। (यहेजकेल ३४:२६-३०)।

ख) वहां के लोग फलदायी होगें (यशायाह ५४:१-३)।

ग) देश में परिपूर्णता होगी (यिर्मयाह २३:५,६)।

घ) संसार भर में एक परिपूर्णता होगी (यशायाह ४९:२२,२३)।

२) हालांकि, वास्तविकता इन अपेक्षाओं से मेल नहीं खा रही थी। इसके बजाय वहां परः

क) सूखा (मलाकी ३:१०)।

ख) फारसियों का राज्य (मलाकी १:८)।

ग) इस्राएल में जन्म स्तर कम था।

टिप्पणियाँ -

२. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि।

क. यह पुस्तक लगभग ४६० ई.पू में लिखी गयी थी।

ख. बेबिलोन से यहूदियों का निर्वासन जो ५८६ वर्ष पहले प्रारम्भ हुआ था वह करीब ७५ वर्षों पहले समाप्त हो गया था।

१) मन्दिर का पुनःनिर्माण हो चुका था। वहां पर बलि चढ़ाने का कार्य सक्रिय था।

२) व्यवस्था का ज्ञान (एज्रा के द्वारा समझाया जा रहा था)

ग. यह परमेश्वर के लोगों के लिए इन्तज़ार करने का समय था जो कि महान बदलाव के काल के विपरीत था।

घ. ५८६ ई.पू में यहूदा के पतन के बाद से ही एदोमी लगातार प्रबलता के साथ यहूदा पर विरूद्ध आगे बढ़ रहे थे।

बाइबल अध्ययन III

III. खण्ड #१: शीर्षक व तैयारी (१:१.५)।

क. खण्ड की संरचना का अध्ययन #१।

१. पद १।

क. यह पद पुस्तक के शीर्षक को दिखाता है।

ख. यह तीन प्रश्नों के उत्तर देता है।

१) इस पुस्तक का स्वभाव क्या है?

क) यह **"यहोवा द्वारा कहा गया भारी वचन है।"**

ख) **"भारी वचन" का अर्थ क्या है?**

(१) **"भारी** वचन" के लिए इब्रानी शब्द प्रायः अशुभ घटना को दर्शाता है। इसका अभिप्राय "**बोझ**" भी हो सकता है। इस शब्द का पुराने नियम में २७ बार किया गया है। २५ बार उसका इस्तेमाल आने वाले न्याय के दिन के सन्दर्भ में किया गया है।

(२) जब हम **"भारी"** को **"वचन"** के साथ में जोड़ते हैं तब हमें पता चलता है कि वहां पर कितनी भयानक न्यायिक परिस्थिति है, जिसे देखने के लिए हम जकर्याह ९:१ और १२:१ की तुलना भी कर सकते हैं।

टिप्पणियाँ -

टिप्पणियाँ -

२) यह पुस्तक किसको सम्बोधित कर रही है?

क) यह इस्राएलियों को सम्बोधित कर रही है।

ख) **इस्राएल में कौन कौन शामिल हैं?**

(१) मलाकी के लिखे जाने तक, बहुत सी पीढ़ियां गुज़र चुकीं थीं जिसके कारण इस्राएल और यहूदा के बीच अन्तर की मान्यता लगभग धूमिल हो चुकी थी। १० उत्तरी गोत्र (जिन्हें अधिकतर इस्राएली माना जाता है) अपनी पहचान खोने लगे थे।

(२) उन्हें अश्शूर में निर्वासित कर दिया गया था और उन्होंने उत्तर में रहने वाले लोगों के साथ में विवाह करना प्रारम्भ कर दिया था। जिसके परिणाम स्वरूप वहां पर वे लोग पैदा हुए जिन्हें बाद में सामरियों के नाम से जाना गया। अतः, "इस्राएल" शब्द का इस्तेमाल वर्तमान में (जैसा कि बीते दिनों में भी किया है) सामान्य तौर पर यहूदियों के लिए किया जाता है।

३) पुस्तक को किसने लिखा?

क) इसें मलाकी के द्वारा (माध्यम से) लिखा गया।

ख) **मलाकी कौन है?**

(१) मलाकी एक पुराने नियम के भविष्यद्वक्ता थे।

(२) मलाकी शब्द का अर्थ होता है "मेरा संदेशवाहक।"

२. **पद २**

क. उसके तुरन्त बाद हम भविष्यसूचक शैली को देख सकते हैं ("यहोवा कहते हैं")।

ख. हम यहां पर एक लेखन शैली को भी देखते हैं जिसका इस्तेमाल मलाकी की संपूर्ण पुस्तक में किया गया ("लेकिन तुम कहते हो"; और उसके बाद एक सन्देहात्मक प्रश्न पूछा जाता है; जिसका उत्तर परमेश्वर की ओर से मिलता है।)

टिप्पणियाँ -

ग. हमने यह भी देखा कि परमेश्वर यहोवा के पहले वचन यह हैं कि **"मैं ने तुम से प्रेम किया है"** ध्यान दें कि यहां पर इस्तेमाल किया गया सिद्ध काल यह दर्शाता है कि उसने हमें भूतकाल में भी प्रेम किया है और वह हमें वर्तमान काल में भी प्रेम करता है। ये शब्द पाठक को पूरी तरह से भावनात्मक तौर पर तैयार करते हैं कि वह शेष पुस्तक की विषय वस्तु को साशय को महसूस कर सके।

१) परमेश्वर बोलते हैं।

२) उसके लोग कहते हैं, लेकिन काम उल्टे ही करते हैं।

३) **"लेकिन"** शब्द विरोधाभास की शुरूआत को चिन्हित करता है।

क) परमेश्वर अपने लोगों से कहते हैं कि वह तो उन्हें प्रेम करते हैं, "**लेकिन**" लेकिन उनकी प्रतिक्रिया से प्रतीत होता है कि उन्हें इस बात पर विश्वास नहीं है।

ख) परमेश्वर का वचन उसके लोगों के विरोध में बातें करता है। इसी प्रकरण को हम पूरी पुस्तक में देखने जा रहे हैं।

घ. उनके सन्देह पर परमेश्वर की प्रतिउत्तर में हम एक और विरोधाभास को देखते हैं ("**परन्तु**" पर ध्यान दें)।

१) विरोध तो याकूब और एसाव में है और उसका इस्तेमाल परमेश्वर के प्रेम को प्रदर्शित करने के लिए किया गया है।

२) जब हम इस बात को समझ जाते हैं कि एसाव केवल याकूब का भाई ही नहीं था वरन वह जुड़वा था और बड़ा था तब विरोध और अधिक बड़ जाता है। यहां पर हम मुख्य बात को समझाने के लिए चुप्पी साधने के इस्तेमाल को देखते हैं

ङ. इस पद में परेशानी की बात यह है कि हम इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि परमेश्वर ने इस्राएल के प्रति अपने प्रेम को ज़ाहिर करने के लिए सम्बन्धित तर्कों का इस्तेमाल किया है। परमेश्वर के चुनाव के लिए कोई शर्त या स्थिति निर्धारण नहीं है। हम तो केवल सहजता से पढ़ते हैंः **"मैं ने याकूब को प्रेम किया है।"**

टिप्पणियाँ -

च. क्या परमेश्वर एसाव को त्यागकर याकूब को प्रेम करते (चुनते) हैं?

१) सर्वप्रथम चलिए हम यह दिखाएं कि किस तरह से "प्रेम करने" और "चुनने" का विचार एक दूसरे से जुड़ा है। व्यवस्थाविवरण ७:६,७ को पढ़ें। देखिए किस तरह से पद ७ में **"तुम से स्नेह किया"** और **"तुम्हें चुना"** आपस में अदल-बदल करने वाले शब्द हैं।

२) दूसरा, हमें फिर से ज़ोर देना चाहिए कि परमेश्वर ने इस्राएल को उसके किसी काम के कारण नहीं चुना (प्रेम किया) या फिर वे दूसरों से गिनती में बढ़कर थे। उसने उन्हें केवल दो कारणों से चुनाः

क) क्योंकि वह उनसे प्रेम रखता है (व्यवस्थाविवरण ७:८ और (इस शब्द पर ध्यान देना बहुत जरूरी है)।

ख) क्योंकि वह अब्राहम के साथ अपनी शपथ को पूरा करना चाहता था। (व्यवस्था ७:८)।

३) तीसरा, हमे अब्राहम की वाचा में क्या कहा गया था उस पर भी ध्यान देना चाहिए। उत्पत्ति १२:१-३ तक पढ़ें। ध्यान दें कि इस वाचा के दो भाग कैसे होते हैं। एक भाग बात करता है कि परमेश्वर अब्राहम को किस तरह से आशीष देगें। और दूसरा भाग यह बताता है कि अब्राहम किस प्रकार से जाति जाति के लोगों के लिए आशीष का कारण ठहरेगा। (याद रखें कि एसाव इन जातियों में से एक था।)

क) अब्राहम को जातियों की बलि देकर नहीं चुना गया था। परमेश्वर ने अब्राहम को इसलिए नहीं चुना कि वे जातियों को बाहर निकाल दे। वरन उन्होंने अब्राहम को इसलिए चुना ताकि वह जातियों को शामिल कर सके।

टिप्पणियाँ -

ख) जब परमेश्वर यह कहते हैं कि वह याकूब से प्रेम (चुनते) करते हैं तो इसका अर्थ यह बिल्कुल नहीं है कि वह एसाव को तुच्छ जान रहे हैं। इसका अर्थ यह है कि उन्होंने एसाव को नहीं चुना। लेकिन इसके लिए एसाव को अलग होने या निकलने की जरूरत नहीं है। उसे शामिल किया जा सके इसी वजह से परमेश्वर ने इस्राएल को चुना। ताकि इस तरह से, इस्राएल के चुने जाने के द्वारा सारी जातियों तक पहुंचने की परमेश्वर की योजना में एसाव को भी शामिल किया जा सके।

(१) यह नहीं समझना चाहिए किसी चुनने के लिए किसी का निकाला जाना जरूरी है। हमें समझना चाहिए कि इसमें दूसरों को जोड़ने की बात हो रही है।

(२) हमें चुने जाने के अवसर व सौभाग्य के साथ साथ चुने जाने की जिम्मेदारियों पर भी अधिक से अधिक बल देना चाहिए। यह विचार इस पुस्तक का एक प्रचलित संदेश होगा।

३. पद ३।

क. इस पद की संरचना इसके संचार अर्थात सामान्य से विशेष होने पर आधारित है। **"मैं ने अप्रिय जाना"** (सामान्य) से आगे बढ़कर **"मैं ने बना दिया"** (विशेष)।

१) हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि परमेश्वर द्वारा एसाव को तुच्छ जानना परमेश्वर द्वारा किसी विशेष समूह के लोगों को तुच्छ जानने का परिणाम नहीं था। परमेश्वर ने एसाव (एदोम) को तुच्छ नहीं जाना। एदोम ने इस्राएल को तुच्छ जानकर परमेश्वर को तुच्छ जाना (निर्वासन के समय से ही एदोम, इस्राएल के विरूद्ध रहा है)।

२) यहां पर सारा संकेन्द्र परमेश्वर की श्रेष्ठता पर है। वह लोगों को आशीष देने के लिए अपनी ही प्रणाली बनाने में श्रेष्ठ हैं। उन्होंने अपनी संप्रभुता में इस्राएल को चुना। उन्होंने अपनी संप्रभुता में इस्राएल को आशीष देने वालों को आशीष देने और श्राप देने वालों को श्रापित करने के लिए चुना (फिर से उत्पत्ति १२:३ को पढ़ें)। वह अपनी संप्रभुता में अपने न्याय को अपनी व्यवस्था का पालन न करने वालों पर प्रगट करने के लिए दूसरों को इस्तेमाल (नियुक्त) करते हैं। (ध्यान दें कि जंगलों में गीदड़ों वाला वचन सम्भवतः क्रूर नाबातेनी अरब वासियों के दर्शाते हैं जो उस समय पर संसार के उस भाग पर राज्य किया करते थे)।

टिप्पणियाँ -

ख. इस वचन में ध्यान देने योग्य शब्द "लेकिन" है। एक बार फिर से हम विरोधाभास के विचार पर बल देते हुए देखते हैं। पुनरावलोकन करने के लिए निम्मलिखित आरेख का उपयोग करें।

पद २	पद ३
परन्तु	लेकिन
↓	↓
याकूब	एसाव
↓	↓
प्रिय	अप्रिय
↑	↑
चुना हुआ	नहीं चुना

१) क्या परमेश्वर लोगों को अप्रिय जानते हैं?

क) जिस प्रकार से **"प्रिय जानना"** का अर्थ **"चुना जाना"** समझा जाता है ठीक उसी प्रकार से, **"अप्रिय जानना"** के द्वारा **"नहीं चुनना"** समझा जाना चाहिए। (याद रखें, इसका अर्थ तुच्छ जानना या निकाल देना नहीं होता।)

ख) **"अप्रिय जानना"** के विचार को हम अन्य इस्तेमालों के अध्ययन के द्वारा समझ सकते हैं। पढ़ें उत्पत्ति २९:३०-३३; व्यवस्थाविवरण २१:१५-१७; लूका १४:२६; मत्ती **१०:३७।**

(१) याकूब ने लिया को **"अप्रिय जाना"** (उत्पत्ति २९:३१)। इसका अर्थ यह नहीं था कि उसने उसे मन से अप्रिय जाना (पद ३० में दर्शाता है कि वास्तव में उसने लिया से प्रेम किया)। बात वास्तव में यह है कि उसने राहेल को चुना और लिया को नहीं चुना।

(२) हम यही बात व्यवस्था विवरण २१:१५-१७ में पाते हैं।

टिप्पणियाँ -

(३) लूका १४:२६ में लिखे **"अप्रिय जाना"** शब्द का अर्थ मत्ती १०:३७ के द्वारा ठीक वही निकाला गया है जैसा हमने पिछले दो उदाहरणों में देखा है। वहाँ पर भी अभिप्राय यह नहीं है कि हम अपने माता पिता, बच्चों इत्यादि से मन से घृणा करते हैं (एक बार फिर से देखें कि मत्ती १०:३७ में शब्द **"अधिक"** वास्तव में दर्शाता है कि हम अपने माता पिता व बच्चों को प्रेम करते हैं)। यहां पर विचार यह है कि मसीही लोग यीशु को चुनते हैं दूसरों को नहीं।

(क) एक बार फिर से इसका अर्थ यह नहीं है कि हम किसी को तुच्छ समझते या उन्हें निकाल देते हैं। लेकिन इसका अर्थ यह है कि यीशु का चुनाव करने के द्वारा अन्य लोग हमारे जीवन में जुड़ गये हैं। व्यवहारिक तौर पर कहें तो पति बेहतर पति इसलिए बन रहे हैं क्योंकि उन्होंने पत्नी की बजाय यीशु को चुना है। एक पति सच में अपनी पत्नी को तब प्रेम कर सकता है जब वह यीशु को अपने जीवन में प्रथम स्थान देने का समर्पण करता है। जो पति अपनी पत्नी को "**अप्रिय**" जानता है (चुनता नहीं है) वह वास्तव में अपनी पत्नी को अधिक प्रेम कर सकता है।

(ख) लिआ को याकूब केवल तब ही प्रेम कर सकता था जब वह राहेल को चुनता। हम कह सकते हैं कि उसे तो "एक ही पत्नी का पति होना था" ताकि वह उनमें से किसी एक को ठीक ढंग से प्रेम कर सके (इसे कहने का दूसरा तरीका यह है कि, आप दो स्वामियों की सेवा नहीं कर सकते या फिर आप परमेश्वर और धन दोनों की सेवा नहीं कर सकते)। याकूब को दोनों को प्रेम करने के लिए एक को चुनना था। उसने राहेल से प्रेम करने के कारण लिया से प्रेम किया (आदर्श के रूप में देखा जाए तो, अलग तरीके से मगर यह एक पत्नी के साथ जीवन बिताने का नियमित तरीका है)।

टिप्पणियाँ -

(ग) एक पत्नी के साथ रिश्ता रखने का विचार उस विचार के साथ मेल खाता है जैसा परमेश्वर मसीही को करने के लिए बुलाते हैं। यह बहुत ही रूचीकर है कि परमेश्वर अपने और मनुष्य के बीच रिश्ते को सम्बोधित करने के लिए एक पुरूष और उसकी पत्नी के बीच मनागमस रिश्ते अर्थात एक पत्नी के प्रति समर्पित पुरूष के रिश्ते को प्रतीकात्मक इस्तेमाल करते हैं (उदाहरण के लिए, होशे के संदेश पर ध्यान दें)। वह हमें **केवल एक** परमेश्वर के प्रति समर्पित होने के लिए बुलाते हैं। जो लोग यह समर्पण करते हैं वह परिवार के अच्छे सदस्य और एक अच्छे नागरिक हो सकते हैं, इसलिए नहीं कि उनके लिए परिवार और देश प्राथमिकता है, वरन इसलिए कि उन्होंने अपना जीवन पूरी तरह से परमेश्वर को समर्पित किया है और परमेश्वर को अधिकार दिया है कि वह उन्हें परिवार का अच्छा सदस्य और देश का अच्छा नागरिक बना सकें। इन सारे प्रकाशनों के प्रकाश में, यह ध्यान देना बड़ा रूचीकर है कि मत्ती ६:३३ में "**सर्वप्रथम**" के लिए ग्रीक शब्द "**केवल**" है। केवल परमेश्वर के राज्य की खोज करो तो बाकि की सारी चीज़ें तुम में जुड़ जाएंगी।

ग) अब हम अच्छी तरह समझ सकते हैं कि परमेश्वर द्वारा एसाव को "**अप्रिय**" जानने का अर्थ क्या है। उसकी योजना यह थी कि वह **केवल** इस्राएल को चुनने के द्वारा दूसरो को प्रेम करे, उन्हें जोड़े और उन्हें आशीष दे। इस्राएल, मिश्नरी देश (उत्पत्ति १२:१-३ के विचार को स्मरण करें), इसलिए चुना गया था ताकि परमेश्वर सारे संसार को प्रेम कर सकें। याद करें, यूहन्ना ३:१६ कहता है कि **"परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम किया।"** परमेश्वर दूसरों को चुनने के लिए इस्राएल को चुनते हैं। नये नियम की भाषा में कहें तो, वह हम से इसलिए प्रेम करते हैं ताकि हम दूसरों को प्रेम करें (१यूहन्ना ४:१९)

चर्चा विषय

चर्चा करें कि यह समझ किस प्रकार मसीहियों के जीवन जीने के तरीके को प्रभावित करेगी।

टिप्पणियाँ -

२) **इसमें कोई गलत बात नहीं है कि परमेश्वर एक को चुनते हैं और दूसरे को नहीं चुनते?**

क) इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमें मलाकी १:२,३ के नये नियम में समकक्ष सन्दर्भ का अध्ययन करना बहुत ज़रूरी है। पढ़ें ९:६-२१।

(१) सर्वप्रथम, हमे पद १९-२१ पर ध्यान सकेन्द्रित करना चाहिए। परमेश्वर संप्रभु है। यह वास्तव में चर्चा का अन्त या निचोड़ होना चाहिए। परमेश्वर, को सृष्टिकर्ता होने के नाते अपनी इच्छा से चुनने का अधिकार होना चाहिए।

(२) लेकिन परमेश्वर हमें व्याख्या से बढ़कर समझाते हैं। पढ़ें पद ६।

(क) परमेश्वर का न्याय मनुष्य के "न्याय" से अलग है। मनुष्य न्याय और उचित को समानता के आधार पर परिभाषित करता है। परमेश्वर न्याय और क्या उचित है, और मनुष्यों को दी गयी जिम्मेदारियों के प्रति प्रतिक्रिया के आधार पर परिभाषित करते हैं (उदाहरण के लिए, तोड़ों के दृष्टान्त में स्वामी हर एक दास का न्याय करते हैं **"प्रत्येक की योग्यता के अनुसार":** देखें मत्ती २५:१५)।

(ख) परमेश्वर का न्याय या उनका न्यायोच्चित होना इस बात पर आधारित होता है कि मनुष्य ने परमेश्वर की आज्ञाओं को माना है या नहीं। परमेश्वर अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा करने के कारण धर्मी ठहरते हैं। मनुष्य के न्याय के समझ परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं के विषय वस्तु के मूल्यांकन पर केन्द्रित होती है। लेकिन परमेश्वर के न्याय के प्रति समझ प्रतिज्ञाओं के प्रति उनकी विश्वासयोग्यता पर संकेन्द्रित होती है। (उन प्रतिज्ञाओं की विषय वस्तु मनुष्यों के मूल्यांकन से प्रभावित नहीं होतीं क्योंकि उन्हें परमेश्वर की संप्रभुता में स्थापित किया गया हैः देखें रोमियों ९:१९-२१)।

टिप्पणियाँ -

(ग) अन्त में, अगर मनुष्य "चुने जाने" और निर्वाचन के बाइबल आधारित विचार को समझ जाते हैं तो यह प्रश्न उनके लिए परेशान करने वाला नहीं होगा। चुनने की प्रक्रिया को इस तरह से तैयार किया गया है कि उसमें दूसरों को शामिल किया जा सके। चुनाव किसी एक समूह के लिए आरक्षित नहीं किया गया है, **"इसलिए कि जो इस्राएल के वंश हैं वे सब इस्राएली नहीं हैं।"**

ख) **इसलिए हम क्या कहें? क्या परमेश्वर के यहां अन्याय है? कदापि नहीं। (रोमियों ९:१४)।**

४. पद ४।

क. इस पद का मुख्य शब्द "**यद्यपि**" है। यह परमेश्वर के संप्रभु नियन्त्रण और मनुष्य की आत्मनिर्भरता के बीच विरोध उत्पन्न करता है। एदोम निर्माण करने के लिए उसकी "स्वतन्त्र इच्छा" की शक्ति पर ज़ोर देने की कोशिश करता है और परमेश्वर उसकी योजनाओं पर अपनी संप्रभुता का दावा करने के द्वारा उत्तर देते हैं। ध्यान से इस संरचना को देखें जैसे कि यह निम्नलिखित आरेख में दिखाई गयी है।

एदोम कहते हैं:	**प्रभु कहते हैं:**
हम बनाएंगे	चाहें वे बना लें
|	|
खण्डरों को खड़ा करेंगे	मैं इसे ध्वस्थ कर दूंगा

टिप्पणियाँ -

ख. **किस तरह से मनुष्य की स्वतन्त्र इच्छा परमेश्वर की संप्रभुता से जुड़ी हुई है?**

१) यह सत्य है कि मनुष्य के पास स्वतन्त्र इच्छा है। लेकिन यह स्वतन्त्र इच्छा रचनात्मक इच्छा नहीं है। यह ग्रहण करने वाली इच्छा है। अर्थात परमेश्वर से प्राप्त करने के लिए पूरी तरह से स्वतन्त्र है,लेकिन वह परमेश्वर से अलग कुछ और रचनों के लिए स्वतन्त्र नहीं है। (यूहन्ना १:१२,१३)।

२) इसीलिए एदोमी अपनी सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए अपनी स्वतन्त्र इच्छा का इस्तेमाल नहीं कर सकते हैं। उनकी मंजिल उनके नियन्त्रण में नहीं है। उनकी स्वतन्त्र इच्छा का इस्तेमाल इस्राएल को सकारात्मक प्रतिउत्तर देने के माध्यम से परमेश्वर को सकारात्मक प्रतिउत्तर देने के लिए किया जा सकता था,लेकिन उन्होंने परमेश्वर को तुच्छ जाना। अब उनकी स्वतन्त्र इच्छा उन्हें बचाने के लिए पर्याप्त नहीं है। परमेश्वर मनुष्य द्वारा स्वयं को बचाने की कोशिशों से बढ़कर हैं।

चर्चा विषय

लूका १०:१६ को पढ़ें और चर्चा करें कि लोग परमेश्वर द्वारा भेजे गये दासों को अस्वीकार करने के द्वारा किस प्रकार परमेश्वर को अस्वीकार कर देते हैं।

ग. हमें यह ध्यान रखना है कि यहां पर परमेश्वर को **"सेनाओं के यहोवा"** के नाम से सम्बोधित किया गया है। मलाकी की पुस्तक के संदेश के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण उपाधि है। मलाकी के ४ छोटे अध्यायों में इसका इस्तेमाल २४ बार किया गया है।

१) **इस उपाधि का क्या अर्थ है?**

२) "**सेनाओं**" शब्द का अर्थ आलौकिक शक्तियां है। यह परमेश्वर के सार्वभौमिक व संप्रभु अधिकार को दिखाता है। यहोवा का अर्थ सारी शक्तियों का प्रभु, संपूर्ण जगत का प्रभु, या राष्ट्रों का प्रभु है।

टिप्पणियाँ -

५. पद ५।

क. "**और**" शब्द पद ४ और ५ को जोड़ता है। यह बताता है कि एदोम का क्या परिणाम हुआ।

ख. परमेश्वर द्वारा भेजे गये उनके चुने हुए दासों के अनादर के कारण उनके विरूद्ध परमेश्वर की संप्रभुता और उनकी शक्ति प्रगट होगी और जिसके परिणाम स्वरूप इस्राएल परमेश्वर की महानता की उदघोषणा करेगा।

१) **यह उदघोषणा किस के लिए की जाएगी?**

क) सर्वप्रथम, हम उन बातों व बिन्दुओं को याद रखें जो हम ने पद १-४ में "**जातियों**" के सन्दर्भ में की है।

(१) इस्राएल को "**जातियों**" के लिए आशीष (गवाही) होने के लिए चुना गया था।

(२) उदघोषण या गवाही का विषय सेनाओं का यहोवा या "**जातियों**" का प्रभु है।

ख) दूसरा, हमें इस प्रकार के वाक्यों **"इस्राएल की सीमा से आगे"** और दिये जाने वाले बल के बीच नियमितता पर भी ध्यान दें।

ग) साशय यह है कि जो भी कुछ अभी तक कहा गया है वह परमेश्वर की ओर से इस्राएल को सही दिशा की ओर धेकेलने की कोशिश है। उन्हें एक मिश्नरी राष्ट्र के रूप में वाचा के एक हिस्से को पूरा करना है। वे ज्योति हैं और उन्हें परमेश्वर के **"प्रताप को इस्राएल की सीमाओं से आगे ले जान"** के लिए संसार भर में चमकना होगा। उन्हें "**जातियों**" तक इन सच्चाईयों को लेकर जाना होगा।

टिप्पणियाँ -

२) **ये बिन्दु परमेश्वर के द्वारा कहे गये पद २ में प्रारम्भिक वाक्य से संबंध रखते हैं (मैं ने तुम्हें प्रेम किया)?**

क) एक बार फिर से हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि परमेश्वर के छुटकारे की योजना उनके चुने हुए लोगों पर आधारित है जो मिश्नरी लोग होगें।

ख) आगे, हमें १ यूहन्ना ४:१९ के सिद्धान्त को लागू करना चाहिए। यदि यह सत्य है कि हम दूसरों को इसलिए प्रेम कर सकते हैं क्योंकि पहले परमेश्वर ने हम से प्रेम किया है, तो हमारे लिए यह भी जानना बहुत जरूरी है कि परमेश्वर हम से प्रेम करते हैं। इस्राएल यह देखने में असफल रही कि परमेश्वर ने उससे प्रेम किया। वह दूसरों को आशीषित नहीं कर पा रही थी। निम्नलिखित आरेख को देखें।

उत्पत्ति १२:१-३	भाग १: मैं तुम्हें आशीष दूँगा।	———	मलाकी १:१-४ – परमेश्वर यहूदा के प्रति प्रेम को प्रगट करते हैं
———	ताकि	———	ताकि
अब्राहम से बाँधी गई वाचा	भाग २: आप एक आशीष बनें	———	मलाकी १:५ -ताकि यहूदा अन्य देशों को प्रेम करे।

*** ध्यान दें: यहूदा द्वारा अन्य देशों को "प्रेम करने" का विचार उसकी स्वेच्छा पर आधारित है, परमेश्वर की गवाही देना एक प्रभावशाली तरीका है।

ख. भाग १ की संरचना की रूपरेखा #१ (रूपरेखा का इस्तेमाल करते हुए, विद्यार्थियों को दोनों भागों में सम्बन्ध को पहचानने के लिए प्रोत्साहित करें)।

१. उपाधि (पद १)।

२. इस्राएल और परमेश्वर के बीच की बातचीत (पद २,३)।

क. परमेश्वर उनसे प्रेम करते हैं (पद २ ख)।

ख. वे पमरेश्वर के प्रेम पर संदेह करते हैं (पद २ ख)।

टिप्पणियाँ -

ग. परमेश्वर उनके प्रश्न का उत्तर देते हैं (पद २ ख-३)।

१) एसाव और याकूब दोनों एक दूसरे के विरोधी हैं (पद २ ख-३)।

क) परमेश्वर ने याकूब को प्रिय जाना (पद २ ख)।

ख) परमेश्वर ने एसाव को अप्रिय जाना (पद ३)।

(१) परमेश्वर ने उसके पहाड़ को उजाड़ बना दिया (पद ३ क)।

(२) एदोम की विरासत गीदड़ों के रहने का स्थान है (पद ३ ख)।

३. एदोम और परमेश्वर के बीच की बातचीत (पद ४)।

क. एदोम घमण्ड से भरी बातें करता है (पद ४ क)।

ख. परमेश्वर उनकी योजनाओं में संप्रभु होने की घोषणा करते हैं (पद ४ ख)।

४. इस बातचीत के बार इस्रासल का निष्कर्ष (पद ५)।

ग. भाग #१ का निष्कर्ष।

१. अन्तिम बिन्दु और विचार।

क. हालांकि लगातार बात एदोम की हो रही है लेकिन, इस भाग का मुख्य केन्द्र इस्राएल और इस्राएल के लोगों के प्रति परमेश्वर का प्रेम है। अन्त में निष्कर्ष यह निकलाता है कि उनके भीतर से अन्य लोगों के लिए प्रेम निकलना चाहिए। इस्राएलियों को यह समझना चाहिए कि उन्हें, एक चुने हुए जाति के रूप में, अन्य देशों से जुड़े हुए हैं।

ख. परमेश्वर ने आपको क्यों चुना? सबसे पहले तो परमेश्वर ने आपको बिना किसी शर्त और एक तरफा प्रेम किया है। दूसरा, उन्होंने आपको इसलिए चुना है ताकि वह दूसरों को शामिल कर सकें।

ग. हमें चुनने के लिए परमेश्वर के प्रति हमार प्रतिउत्तर धन्यवाद और कृतज्ञता होनी चाहिए। इस धन्यवादी बोध के द्वारा हम में हमारे अलावा (हमारी सीमाओं के आगे) दूसरे लोगों (देशों) तक जाने की प्रेरणा उत्पन्न होनी चाहिए।

टिप्पणियाँ -

२. सारांश वाक्य। क्योंकि परमेश्वर स्वयं अपने प्रेम को प्रगट करना तथा उसके प्रति लोगों को प्रतिउत्तर चाहते हैं, इसलिए हमें उसके द्वारा बांधी गयी वाचा के अनुसार जीवन व्यतीत करके उसके प्रेम के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करनी चाहिए।

३. शीर्षक। परमेश्वर अपने लोगों से प्रेम करते हैं।

IV. भाग #२: याजक के पुत्र (१:६-१४)।

क. भाग २ की संरचना का अध्ययन #२।

१. पद ६।

क. १:१-५ में परमेश्वर ने इस्राएल को उनके प्रति प्रतिउत्तर न देने की गम्भीरता हो लेकर तैयार किया। पद १:६-१४ में परमेश्वर उनके प्रतिनिधियों (याजकों के) के पापों की ओर इंगित करते हुए उनके पापों की ओर इशारा करने लगे।

ख. एक विवाद जो एक छोटी बात से लेकर एक बड़े विवाद का रूप धारण कर लेता है वह हमे इन वचनों में दिखाई देता है जिससे प्रगट होता है कि इस्राएल द्वारा परमेश्वर को प्रतिउत्तर न देना कितना मूर्खता पूर्ण और अस्वाभाविक कार्य है।

१) हम यहां पर **"पिता" "स्वामी"** और "**आदर**" जैसे शब्दों के दोहराव को बार बार देखते हैं। विवाद का विषय यहां पर यह है कि यदि छोटे मामले सत्य हैं, तो बड़े मामले भी सत्य होगें। यदि सांसारिक पिता का आदर किया जाता है, तो स्वर्गीय पिता का कितना आदर किया जाना चाहिए?

२) दुःखद बात यह है कि बड़ी बात की उपेक्षा की जा रही है।

क) **याजक लोग किस तरह से परमेश्वर की उपेक्षा करते हैं?**

(१) वाक्य "तो यदि मैं" यह दर्शाता है कि समस्या यह नहीं है याजक परमेश्वर को पिता या स्वामी नहीं कहना चाहते (क्योंकि याजक जब भी धर्ममत का उच्चारण करते हैं तो उनके लिए इस प्रकार के उच्चारण करना उनका कर्तव्य होता है)। समस्या उनकी बातों में नहीं वरन समस्या उनके व्यवहार में है। उनकी बातें उनके व्यवहार से मेल नहीं खाती हैं।

(२) अतः, हम देखते हैं कि परमेश्वर की उपेक्षा करने का कार्य केवल विरोध करने की अवस्था में ही नहीं किया जा रहा है। वरन यह कार्य पूरी तरह से कपट के साथ किया जा रहा है।

टिप्पणियाँ -

ख) "तुच्छ" शब्द का अर्थ क्या होता है?

(१) इसका अर्थ किसी चीज़ को कम अहमियत देना होता है; किसी चीज़ के मूल्य को कम करना।

(२) याजक परमेश्वर को तुच्छ जान रहे थे। वह उन्हें उनका उचित स्थान व सम्मान नहीं दे रहे थे।

ग. एक बार फिर से हम उपाधि **"सेनाओं के यहोवा"** पर ध्यान देगें। वह देश देश के परमेश्वर हैं और उन्हें आदर मिलना ही चाहिए। यदि उन्हें अपने ही बच्चों के द्वारा आदर प्राप्त नहीं होगा तो, फिर अन्य देश व जातियां उन्हें आदर व सम्मान देना कैसे सीखेंगे?

२. पद ७।

शब्द **"तुच्छ जाना"** और "**अपवित्र**" पर ध्यान देना चाहिए। इसके अलावा हमें **"परमेश्वर के नाम"** (पद ६ घ), **"परमेश्वर की वेदी"** (पद ७ क), "**परमेश्वर**" ("एकमात्र" पदः ७ ख), **"परमेश्वर की मेज़"** (प्रभु की मेजः ७ ग) युग्मों पर भी ध्यान देना चाहिए। निम्नलिखित आरेख का अध्ययन करें।

तुच्छ जाना_____मेरा नाम

अपवित्र किया_____मेरी वेदी

अपवित्र किया_____मुझे(एकमात्र)

तुच्छ जाना_____मेरी मेज़

तुच्छ जाना = अपवित्र किया

मेरा नाम = मेरी वेदी = मुझ = मेरी मेज़

टिप्पणियाँ -

क. अब हम निम्नलिखित तरीके से पद ६ और ७ की बहस की रूपरेखा निर्धारित करके, मुख्य विचार की समीक्षा कर सकते हैं:

१) परमेश्वर: तुमने मेरे नाम को तुच्छ जाना है।

२) याजक: कैसे?

३) परमेश्वरः अपवित्र भोजन को मेरी वेदी पर रखकर।

४) याजकः हां, लेकिन उससे आपके अपवित्र होने का क्या सम्बन्ध है?

५) परमेश्वर: जब मेरी मेज़ को क्यों अपवित्र किया गया, तो मैं स्वयं भी अपवित्र हो गया।

३. पद ८।

क. पद ६ में हमने देखा कि उनके बीच में भेंट चढ़ाने वाले को लेकर समस्या थी। पद ८ में हम देखते हैं कि एक समस्या भेंट को लेकर है। इन दो समस्याओं को सामान्यतः एक साथ ही देखा जा रहा है। ये एक दूसरे को प्रभावित करते हैं (पद ७ में भी हम दोनों समस्याओं को एक साथ देखते हैं)।

ख. भेटों को लेकर क्या समस्या थी?

१) व्यवस्थाविवरण १५:२१ को पढ़ें। सर्वप्रथम इस प्रकार के भेटें निषेध थीं। अतः, याजकों के द्वारा आज्ञाओं का पालन नहीं किया जा रहा था।

२) ऐसा प्रतीत होता है कि समस्याएं अनाज्ञाकारिता से भी गहरी थीं। इस पद के अन्त में परमेश्वर द्वारा सामने लाए गये प्रश्न का विषय यह था कि याजक ऐसे कंलकित वे अयोग्य पशुओं को वेदी पर ला रहे थे जिन्हें कोई अपने असैन्य अधिकारी के पास भी ले जाने की हिम्मत न करे।

क) वे अपने हाकिम के प्रति आदर सम्मान व्यक्त करते थे और वे जानते थे कि जानते थे कि परमेश्वर उनके हाकिम से बढ़कर हैं। फिर भी उनके व्यवहार से परमेश्वर के प्रति आदर प्रगट नहीं हो रहा था। समस्या उनके विश्वास में थी।

ख) वे हाकिम को देख सकते थे। लेकिन वे परमेश्वर को नहीं देख सकते थे। इसलिए वे परमेश्वर की सेवा निभाने के तरीके की वैधता पर प्रश्न करने लगे। बलिदान चढ़ाने की प्रणाली, पूरी तरह से खाली व कपट से भरी हुई केवल एक धार्मिक विधी बनकर रह गयी।

टिप्पणियाँ -

ग) जो भेंट विश्वास द्वारा नहीं चढ़ाई जाती वह परमेश्वर के भय में नहीं वरन कपट के साथ प्रस्तुत की जाती है और वह परमेश्वर के सम्मुख में ग्रहण योग्य नहीं ठहरती। (इब्रानियों ११:४) को देखें।

३) उनकी भेटों को अर्पित करते समय, याजकों ने परमेश्वर के मूल्य को कम आँका। उन्होंने उसे तुच्छ जाना। उससे भी बढ़कर उन्होंने अपने छुटकारे को भी तुच्छ जाना और विश्वास में कमी के कारण कपट करने लगे।

२. पद ९।

क. सर्वप्रथम, हमें यह ध्यान देना चाहिए कि इस पद के शब्द **"सेनाओं के यहोवा"** के द्वारा बोले गये हैं।

ख. पद ८ में हम प्रश्नों को देखते हैंः **"क्या वह** (हाकिम) **तुम से प्रसन्न होगा?"** पद ९ में इस प्रश्न को फिर से दोहराया गया, लेकिन इस बार उसे हाकिम के बदले परमेश्वर के लिए बोला गया है।

ग. **भेटों और परमेश्वर का अनुग्रह पाने के बीच में क्या सम्बन्ध है?**

१) हाकिम से मिलने के लिए, किसी भी व्यक्ति को उचित भेट या उसके प्रति आदर प्रगट करने के लिए उपहार लाना पड़ता है। इससे उसे भीतर आने में सुरक्षा प्राप्त होती है।

२) पुराने नियम में, उचित बलिदान भेंट चढ़ाने से परमेश्वर के पास सुरक्षित प्रवेश प्राप्त हो जाता है। नये नियम में हम देखते हैं कि उचित भेंट स्तुति और आराधना है। हम स्तुति और प्रशंसा के साथ में उसकी उपस्थिति में प्रवेश करते हैं। हम स्तुति के बलिदान के साथ में भीतर प्रवेश करते हैं।

३) हाकिम के समान परमेश्वर भी, हमारी प्रार्थनाओं और निवेदनों को नहीं सुनेगें यदि हम उसकी उचित और सच्ची आराधना नहीं करते।

टिप्पणियाँ -

घ. इस जगह रूककर हम जल्दी से एक पुनरावलोकन कर लेते हैं।

१) पूरा बल इस्राएल पर दिया गया है। लेकिन फिर भी यहां परमेश्वर द्वारा कही गयी हर एक बात का एक सार्वभौमिक पहलू या सभी के लिए एक उद्देश्य है। यहां पर भी हमें **"सेनाओं के यहोवा"** के दोहराव (पद ४, ६, ८, ९), छुटकारे की सार्वभौमिक योजना के हवालों को (पद ७, ८), जाति जातियों के बीच में परमेश्वर की प्रतिष्ठा के महत्व के साशय ("मेरा नाम": पद ६), तथा परमेश्वर की महानता से सम्बन्धित प्रगट किये गये कथनों **"इस्राएल की सीमाओं से परे"** को ध्यान में रखना (पद ५)।

२) पद ६ में भेंट चढ़ाने वाले की विशेष समस्या को दर्शाया गया है। पद ७ में भेट सम्बन्धी विशेष समस्या को दर्शाया गया है। पद ७ में दो सामान्य समस्याओं को एक साथ सम्बोधित किया गया है। पद ९ में समस्या के दुःखद परिणाम के बारे में बताया गया है।

३. पद १०।

क. यहां पर हम परमेश्वर द्वारा लगातार याजकों को अस्वीकृत करते हुए देखते हैं। जो बात पद ९ में अस्पष्ट थी (कि याजकों और उनके वंशज़ों को स्वीकार नहीं किया जाएगा) वह १० पद में स्पष्ट हो गयी।

ख. ऐसा प्रतीत होता है कि परमेश्वर और भी कुछ कहना चाहते हैं। वह अपनी इच्छा प्रगट करते हुए सम्पूर्ण बलिदान चढ़ाने की पद्धति को बन्द करने की मांग करते हैं **("किवाड़ों को बन्द करता")।**

ग. **परमेश्वर क्यों चाहते थे कि वे अपने बलिदानों को लाना बन्द कर दें?** (क्या बलिदान या भेंट चढ़ाने की पद्धति को समाप्त करने के बजाय सही तरीके का इस्तेमाल करना अच्छा नहीं है)?

१) इस प्रश्न का कोई स्पष्ट जवाब नहीं है, लेकिन हमें पद के अन्तिम भाग में चीज़ों पर बल दिये जाने तथा उनके दोहराव में थोड़ा संकेत जरूर मिलता है।

क) पद ९ में यह प्र्याप्त तौर पर स्पष्ट था कि परमेश्वर कह रहे हैं कि वह उन्हें व उनकी भेंटों को स्वीकार नहीं करेगें। फिर भी पद १० में परमेश्वर वास्तविकता को दोहरा रहे और उस पर ज़ोर दे रहे हैं।

ख) परमेश्वर अभी भी चिन्ता को व्यक्त करते हैं कि वे अभी नहीं समझ रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मानों वह कह रहे हों: **धोखा न खाओ।**

टिप्पणियाँ -

२) वास्तव में एक केवल परम्परागत, खाली और नाममात्र की आराधना करने से तो आराधना की कोई पद्धति न होना ही अच्छा है। बिना आज्ञाकारिता या गम्भीरता के आराधना करना "**बेकार**" और व्यर्थ है (मरकुस ७:६,७) पर ध्यान दें। जैसा कि मलाकी कहते हैं कि यह मेरी वेदी पर व्यर्थ आग जलाने के जैसा है। इससे भी बढ़कर,धोखे की समस्या है जो कपट और झूठी धार्मिकता के द्वारा आती है। झूठी रीतियां प्रायः झूठा आत्मविश्वास उत्पन्न करा है। खोखले धर्म लोगों को धोखा देते हैं क्योंकि जब वे सही नहीं भी होते तब भी उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि वे सही हैं। मनुष्य ऐसा सोचता है कि बिना किसी वस्तु के बिना छाया उस स्थिति से बेहतर है जिसमें छाया हो ही नहीं। लेकिन परमेश्वर किवाड़ को पूरी तरह बन्द कर देते हैं। मनुष्य कहेगा कि ठण्डा होने से तो अच्छा तो गुनगुना है। लेकिन परमेश्वर चाहेगें कि हम ठण्डे हो जाएं (प्रकाशितवाक्य ३:१५,१६)। परमेश्वर वर्जित पशु स्वीकार करने की बजाय चाहेगें कि कोई बलि न दी जाए (यशायाह १:११-१५)।

क) हम इस पद को एक महत्वपूर्ण अनुप्रयोग में ला सकते हैं। परमेश्वर सबसे बढ़कर कपट से घृणा करते हैं। परमेश्वर खोखले धर्म और विधिवत अनुष्ठानों से नफरत करते हैं जो पूरी तरहे से निरर्थक हैं। वे सब व्यर्थ हैं और उनका अभ्यास करने वालों को धोखा देते हैं। जो लोग गुनगुने हैं वह उन्हें अपने मुंह से बाहर उगल देते हैं (प्रकाशित ३:१६)। परमेश्वर के साथ हां की "हां" और नहीं की "नहीं" होती है (मत्ती ५:३७)। या तो सब कुछ होता है या फिर कुछ भी नहीं (मत्ती १६:२४)।

ख) हमारे जीवन में कपट के क्षेत्र का पूरी तरह से नाश होना चाहिए। वह"किवाड़" बन्द होना चाहिए। जितना अधिक हम कपट को काम करने देते हैं, उतना ही अधिक हम उसे धोखे से मूर्ख बनते हैं।

टिप्पणियाँ -

४. पद ११।

क. जिस बात पर पहले से ज़ोर दिया जा रहा था अब वे और भी अधिक वास्तविक हो गयी है। यहां पर हम **"मेरा नाम", "जातियों के बीच में"** और **"सेनाओं के यहोवा"** जैसे शब्द युग्मों पर ध्यान देगें।

ख. **किस प्रकार से यह सार्वभौमिक अवधारणा इस्राएल के पापों से जुड़ी है?**

१) मुख्य शब्दों में दिया गया पहला शब्द इस वचन में ध्यान देने योग्य शब्द है। "**क्योंकि**" शब्द उस कारण का उल्लेख करता है जिस कारण परमेश्वर भेंटों को स्वीकार नहीं करेगें। यह उनके छुटकारे की सार्वभौमिक योजना के कारण है। प्रभु कह रहे हैं कि वह अपने ही लोगों के हाथों से अशुद्ध भेटें स्वीकार नहीं करेगें, क्योंकि उनका अंतिम लक्ष्य संसार के लोगों से शुद्ध भेटों को प्राप्त करना है।

२) लेकिन, इस्राएल के पाप अन्य देशों के सामने एक बुरी गवाही को प्रस्तुत कर रहे हैं। यह परमेश्वर की उस योजना के विपरीत है जो उन्होंने इस्राएल अर्थात अपने मिश्नरी राष्ट्र के लिए बनाई थी। प्रमाणिक आराधना में अभाव के कारण परमेश्वर की सार्वभौमिक छुटकारे की योजना पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

५. पद १२।

क. इस वचन का इस्तेमाल ध्यान को पुनः समस्या पर लाने के लिए किया गया है। यह उसी बहस का दोहराव है जो पद ६-८ में प्रारम्भ हुआ था।

ख. "**लेकिन**" शब्द परमेश्वर की आशा और वर्तमान वास्तविकता के बीच विरोधाभास को उत्पन्न करता है। पद ११ में **"मेरा नाम महान होगा।"** पद १२ का विरोधाभासी है **"तुम उसे अशुद्ध कर रहे हो"**।

टिप्पणियाँ -

६. पद १३।

क. यहाँ परमेश्वर लगातार समस्या का वर्णन करते हैं (**"भी"** शब्द पर ध्यान दें)।

ख. याजक **"भी"** अपने कामों से उकता गये हैं।

१) **उकता जाना या नाक भौं सिकोड़ना पिछले वचन से कैसे सम्बन्धि है?**

क) याजक गण धार्मिकता के कामों से उकता गये हैं। वे खोखली आराधना करते करते थक गये हैं। धर्म नीरस है। सच्ची और प्रमाणिक आराधना नीरस नहीं होती क्योंकि उसमें फल लगते हैं।

ख) हमारे उत्तर की मुख्य कुंजी यह है। ध्यान दें कि इस नीरसता का सन्दर्भ "**फल**" के नकारात्मक सोच है। (पद १२)।

(१) कपटी धार्मिकता इसलिए नीरस है क्योंकि यह खोखली होती है।

(२) खोखले धर्म की यह दुःखद वास्तविकता है। यह मरा हुआ है। इसमें कुछ वास्तविक जाता नहीं परिणाम में भी वास्तविकता प्राप्त नहीं होती। नीरसता और खोखला धर्म सदैव एक साथ दिखता है। जहां पर वास्तव में सार्थकता नहीं होती (याद रखें, कपट का परिणाम व्यर्थता होती है) वहां पर कोई जीवन व रूची नहीं होती।

लेखक का उदाहरण:

आप खाली समोसे खाते खाते केवल तब ही लम्बी दूरी तय कर सकते हैं जब आप उन्हें खा खाकर उकता नहीं गये हों। यदि फल नहीं है तो बहुत नीरस महसूस होने लगता है।

अपना उदाहरण लिखें:

टिप्पणियाँ -

२) **नीरस होना अगले पद १३ से किस प्रकार संबंध रखता है?**

क) निष्ठाहीनता और नीरसता दो साथ ही साथ चलते हैं। जो बलिदान चढ़ाने गये थे उसका कोई दाम भेटदाता को नहीं चढ़ाना पड़ा था। एक बीमार या चुराया हुआ पशु बलि के लिए बहुत आसान काम है।

ख) एक आसान विश्वास और नीरसता भी साथ साथ चलते हैं। जितनी चीजें हमारे लिए सार्थक हैं उनके लिए अधिकतर हमें कोई न कोई दाम चुकाना पड़ता है।

७. पद १४।

क. एक बार फिर से हम देखते हैं कि, जिस कारण (ध्यान दें "क्योंकि") परमेश्वर याजकों को नकारात्मक ढंग से उत्तर देते हैं वह "**जातियां**" हैं। यह पद इस भाग को समाप्त करता है।

ख. अवधारणा तो स्वाभाविक है। परमेश्वर इस्राएल को उनकी भलाई तथा "**जातियों**" की भलाई के लिए जिन्होंने इस्राएलियों के द्वारा गवाही को प्राप्त किया है, आराधना के निष्ठावान और प्रमाणिक जीवन जीने के लिए बुला रहे हैं।

ग. भाग #२ की संरचना की रूपरेखा (रूपरेखा का इस्तेमाल करते हुए, विद्यार्थियों को अलग अलग खण्डों के बीच संबंधों को पहचानने के लिए प्रोत्साहित करें)।

१. समस्या की परिभाषा (पद ६.९)।

क. भेंटदाता के साथ विशेष समस्या (पद ६)।

ख. सामान्य समस्या (पद ७)।

ग. भेंट के साथ विशेष समस्या (पद ८)।

घ. समस्या का परिणाम (पद ९)।

२. परमेश्वर का निवेदन (पद १०-१२)।

क. विशेष निवेदन और पद ९ की पुष्टि (पद १०)।

ख. निवेदन का कारण (पद ११)।

ग. वर्तमान वास्तविकता (पद १२)।

टिप्पणियाँ -

३. अतिरिक्त समस्याएं (पद १३, १४)।

क. नीरसता (पद १३ क)।

ख. अनुचित प्रकार की भेटें (पद ३ ख, १४ क)।

४. निष्कर्ष (पद १४ ख) - परमेश्वर की अप्रसन्नता के कारण इस प्रकार का निष्कर्ष निकलना है।

घ. खण्ड #२ का निष्कर्ष।

१. अन्तिम बिन्दु और विचार।

लेखक का उदाहरण:

लोग किसी धावक या संगीतकार के समर्पण की बहुत सहराहना करते हैं, लेकिन वे परमेश्वर के लिए समर्पित होने को "अजीब" या "कानूनी" मानते हैं। वे प्रतिदिन ५ घण्टे टेलीविजन देखते हैं लेकिन वे बाइबल पढ़ने के लिए समय नहीं निकाल पाते। वे हज़ारों रूपये खिलौने खरीदने में खर्च कर देते हैं लेकिन वे अपनी कमाई का दशमांश परमेश्वर को नहीं दे पाते हैं। हमारे लिए परमेश्वर की कीमत क्या है? क्या हमने परमेश्वर को तुच्छ जाना है? क्या हम परमेश्वर को वह देते हैं जिसके वह योग्य है? क्या हमारी भेंटों में से कपट की बू आती है? क्या हम प्रमाणिक आराधना के मूल्य को गिनने के लिए तैयार हैं?

अपने उदाहरण को लिखें:

क. क्या हम प्रमाणिक आराधना के मूल्य के गिनने के लिए तैयार हैं?

ख. यदि आप एक सच्चा मसीही जीवन नहीं जी रहे हैं,तो यह बेहतर होगा कि आप "किवाड़ बन्द कर लें" और अपने आप को मसीही कहना बन्द कर दें। क्यों? क्योंकि जातियों में उसके नाम का भय माना जाता है।

टिप्पणियाँ -

२. सारांश कथन। हमें सच्चे परमेश्वर की सच्चाई के साथ आराधना करनी चाहिए जो सेनाओं के यहोवा हैं।

३. शीर्षक। कपटपूर्ण आराधना।

V. खण्ड #३: याजकों का अनुशासन और न्याय (मलाकी २:१-९)।

क. खण्ड #३ की संरचना का अध्ययन।

१. पद १।

क. परमेश्वर इस बात पर बल देते हैं कि वह याजकों को संबोधित कर रहे हैं। वह इस बात को सुनिश्चित करते हैं कि वे जानते हैं कि **"यह आज्ञा"** उनके लिए है।

ख. **यह आज्ञा क्या है**?

१) यह श्राप की वह आज्ञा है जिसका उल्लेख पहली बार १:१४ में किया गया था।

२) यह पद २ में तब स्पष्ट हो जाती है, जब हम **"श्राप"** शब्द को फिर से देखते हैं।

२. पद २।

क. यदि/तो इस पद की रचना का निरीक्षण करना बहुत महत्वपूर्ण है। यह इस तथ्य को स्थापित करता है कि परमेश्वर का न्याय पश्चाताप की बुलाहट से पहले होता है। परमेश्वर हमेशा पश्चाताप करने का अवसर प्रदान करते हैं।

ख. यह चेतावनी तब और मज़बूत हो जाती है जब परमेश्वर कहते हैं, "और वरन्।" ये शब्द पिछली स्थिति की निरंतरता और विस्तार का परिचय देते हैं। न्याय की संभावना वास्तव में एक वास्तविकता बनने लगती है। इससे याजकों को पश्चाताप करने के लिए प्रेरित रहना चाहिए।

टिप्पणियाँ -

ग. **पश्चाताप करने के लिए याजकों को क्या करना चाहिए?**

१) **"क्योंकि"** (पद के अंत में) शब्द परमेश्वर के न्याय के कारण का परिचय देता है। याजकों ने आज्ञा को गंभीरता से नहीं लिया। जैसा कि हमने पहले देखा, आज्ञा श्राप की चेतावनी है। बलि प्रथा से जुड़ी आज्ञाएँ दी हुई हैं। याजकों को उन गलत प्रथाओं से दूर रहना चाहिए जिनका प्रयोग वे परमेश्वर के भवन में कर रहे हैं (देखें १:८,१३,१४)।

२) अपने पाखंडी व्यवहार और अपने खाली रीति-रिवाजों से हटना चाहिए। पद २ में हमें "मन न लगाकर" के विचार की पुनरावृत्ति का निरीक्षण करना चाहिए। इससे पहले पद में, इस विचार को और परिभाषित किया गया है। इसमें परमेश्वर के नाम को न सुनना और उनको आदर न देना शामिल है। उनका पश्चाताप उनके कानों और मन से (सुनो), उनके हृदय में, और फिर उनके कार्यों में जाना चाहिए। यह वास्तविक और विश्वासयोग्य होना चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि परमेश्वर के नाम का आदर किया जाएगा (फिर से, हमें इस परिणाम के सार्वभौमिक निहितार्थों को याद रखना चाहिए)।

घ. हमें अब्राहम की वाचा को भी याद दिलाया जाता है। परमेश्वर इस्राएल को आशीष देंगे और फिर इस्राएल राष्ट्रों को आशीष देगा। वास्तव में, वाचा का पहला भाग दूसरे भाग के पूरा होने पर निर्भर करता है। यदि इस्राएल राष्ट्रों को आशीष नहीं देगा, तो परमेश्वर उन्हें आशीष नहीं देंगे। मलाकी के शब्दों में: "यदि तुम मेरे नाम का आदर न करो" (एक सही गवाही देकर राष्ट्रों को आशीष दें), "तो मैं तुम्हारी आशीषों को श्राप दूंगा" (मैं तुम्हें आशीष नहीं दूंगा)।

१) यह सिद्धांत पूरे इतिहास में सिद्ध हो चुका है। यह बताया जा सकता है कि मिस्र से निकाला जाना स्वयं इसी सिद्धांत का परिणाम था।

२) जब तक राष्ट्रों को परमेश्वर की आशीष मिली हुई थीं, उन्होंने अपनी आशीषों को तब तक बनाए रखा जब तक वे राष्ट्रों को आशीष देने के लिए तैयार थे। यदि उन्होंने राष्ट्रों को आशीष नहीं दी, तो आशीष छीन लिया गया। उदाहरण के लिए, यह देखा जाता है, रोम के पतन में। यह गोथ और वाइकिंग्स के पतन में भी देखा जाता है। बाइबल के अनुसार, इसे बेबीलोन की बंधुआई और ७० ई. में यरूशलेम के विनाश में भी देखा जाता है।

टिप्पणियाँ -

३. पद ३

क. हमें भविष्य काल के उपयोग की एक बहुत ही महत्वपूर्ण पुनरावृत्ति का निरीक्षण करना चाहिए। पद २ में हम "करूँगा" शब्द (२ बार) देखते हैं। यहाँ हमारे पास "करने जा रहा हूँ" शब्द हैं।

ख. ये दोनों पद एक दूसरे से किस प्रकार सम्बंधित हैं?

१) पद ३, पद २ की एक और व्याख्या के रूप में कार्य करता है। निम्नलिखित आरेख का अध्ययन करें।

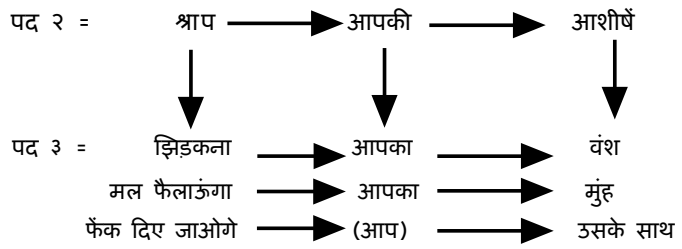

२) परमेश्वर झिड़कने, मल फैलाने और उन्हें बाहर निकालने के द्वारा श्राप देंगे।

३) वे आशीषें जिन्हें परमेश्वर श्राप देंगे:

क) उनके वंशजों (शाब्दिक रूप से "बीज") को श्राप दिया जाएगा। यह उनकी संतानों और/या फसलों को संदर्भित कर सकता है (व्यवस्थाविवरण २८:१८ देखें)।

ख) "मल" एक बलि किए हुए जानवर की अंतडियां थीं जिन्हें छावनी से बाहर ले जाया जाता था और खाल और मांस के साथ जला दिया जाता था (देखें निर्गमन २९:१४; लैव्यव्यवस्था ८:१७; १६:२७)। वे मारे गए जानवरों की अंतडियां थीं (लैव्यव्यवस्था ४:११)।

(१) निहितार्थ यह है कि याजकों को सार्वजनिक रूप से अपमानित किया जाएगा। अगर वे परमेश्वर के सामने मल (पाखण्ड) फेकेंगे, तो परमेश्वर भी उन पर मल फेकेंगे।

(२) परमेश्वर याजकों की प्रतिष्ठा का कारण बनेंगे और याजकों की व्यवस्था का उपहास किया जाएगा (देखें व्यवस्थाविवरण २९:१९; नहेम्याह ३:४-७)।

टिप्पणियाँ -

ग) अंत में, याजकों को "उठाकर फेंक दिया जाएगा।" यह सबसे बड़ा श्राप है क्योंकि यह सबसे बड़ी आशीष को संदर्भित करता है। याजकों को, मल की तरह, परमेश्वर की उपस्थिति से बाहर कर दिया जाएगा। वे परमेश्वर के साथ अपनी संगति और सम्बन्ध को खो देंगे (भजन संहिता ६७:१, २; ७३:२८ पर विचार करें)।

४. पद ४।

क. हमें मुख्य शब्द "तब" और "ताकि" का पालन करना चाहिए। ये शब्द पहले के वचनों के उद्देश्य की ओर इशारा करते हैं।

ख. **परमेश्वर याजकों को श्राप क्यों देंगे?**

१) परमेश्वर के दो उद्देश्य हैं:

क) **"तब तुम जानोगे"** - कठोर शब्द उन्हें आज्ञाकारिता के प्रति जगाने का एक तरीका है। यह उन्हें वापस **परमेश्वर को जानने** की ओर मोड़ने का एक तरीका है।

ख) **"कि मेरी बंधी हुई वाचा बनी रहे"** - परमेश्वर अपनी वाचा को नहीं तोड़ सकते। इस प्रकार, वह याजकों को अनुशासित करेंगे कि वे उनकी ओर फिरें और परमेश्वर को प्रगट करते रहें। (याद रखें, अब्राहम की वाचा एक सेवकाई की वाचा है)।

२) इस बात को जानना महत्वपूर्ण है कि परमेश्वर याजकों को उनके फायदे के लिए अनुशासित कर रहे थे।

ग. **लेवी के साथ क्या वाचा थी**?

१) लेवी के साथ वाचा का कोई औपचारिक अभिलेख नहीं है।

२) अभी के लिए हम केवल गिनती २५:१२,१३ और व्यवस्थाविवरण ३३:९,१० का उल्लेख कर सकते हैं।

टिप्पणियाँ -

५. पद ५।

क. यह पद लेवी के साथ बाँधी गयी वाचा की व्याख्या करता है जिसे पद ४ में लिखा गया था।

१) **वाचा में क्या शामिल है**?

क) इसमें जीवन और शान्ति शामिल है।

ख) गिनती २५:१२,१३ पर विचार करते समय, हम इन्हीं दो बिंदुओं के संदर्भ को याद करेंगे।

(१) याजकों की सेवकाई का परिणाम जीवन (छुटकारा) हुआ। बलिदान किए गए पशुओं का लहू दूसरे के जीवन के लिए बहाए गए जीवन का प्रतिनिधित्व करता है।

(२) इसका परिणाम शान्ति (प्रायश्चित) भी हुई। लेवीय व्यवस्था की स्थापना लोगों का परमेश्वर से मेल मिलाप करने के उद्देश्य से की गई थी।

२) **लेवी को वाचा क्यों दी गई थी?**

क) **"मैंने उन्हें आदर की वस्तु के रूप में दिया।"**

ख) लेवी के लिए परमेश्वर का उद्देश्य यह था कि वह परमेश्वर का भय मानें।

३) **वाचा ने लेवी को कैसे प्रभावित किया**?

क) **"तो"** शब्द परिणाम के विषय में बताता है।

ख) यह परमेश्वर के उद्देश्य के अनुरूप था। लेवी परमेश्वर का भय मानते थे।

ख. हमें परमेश्वर के आदर, भय, या सम्मान के विषय की पुनरावृत्ति का भी निरीक्षण करना चाहिए (देखें १:६)। अब तक, तर्क यह है कि याजक स्वयं वैसे व्यवहार नहीं करते (१:६-२:४) जैसे वे पहले करते थे (२:५)।

टिप्पणियाँ -

६. पद ६

क. यहाँ हमारे पास एक विशिष्टता है कि याजक ने कैसे वाचा का पालन किया। आइए पहले इस पद की संरचना का अध्ययन करें। आरेख देखें।

क¹ = सच्ची शिक्षा .....उसके मुंह में
↓ ↓
क² = कोई अधर्म नहीं.....उसके होठों पर
↓ ↓
ख¹ = शांति/विश्वासयोग्यता .....वह चला
↓ ↓
ख² = अधर्म से .....वह हट गये

ख. हमें यह देखकर आश्चर्य हो सकता है कि याजक रीति-रिवाज़ों और संस्कारों के सेवक से कहीं अधिक थे। वह एक प्रशिक्षक थे। उन्होंने दूसरों को परमेश्वर की ओर फेर दिया। वह परमेश्वर की निकटता में चले। उनकी शिक्षा सत्य, समर्पण और सुधार पर केंद्रित थी। वह वचन और जीवन शैली में परमेश्वर के अनुरूप व्यक्ति थे।

७. पद ७।

क. यहाँ हम "के लिए" और "चाहिए" शब्दों पर ध्यान केंद्रित करना चाहते हैं। पद ६ बताता है कि याजकों ने क्या किया। "के लिए" शब्द उन चीज़ों को करने के कारण का परिचय देता है। उन्होंने ऐसा इसलिए किया क्योंकि उन्हें ऐसा ही करना "चाहिए" था।

ख. हम इस बात पर बल देना चाहते हैं कि याजकों की सेवकाई दो भागों में थी। उन्हें अपने वचनों और अपने जीवन के द्वारा सेवकाई करनी थी। इस सेवकाई के दो भागों को देखने के लिए निम्नलिखित आरेख का अध्ययन करें।

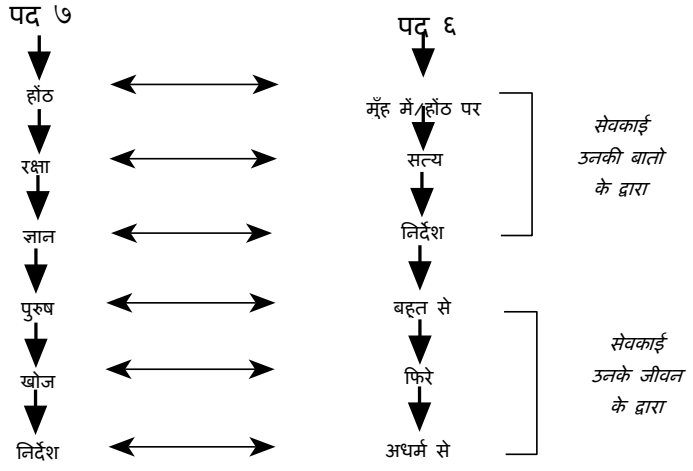

टिप्पणियाँ -

ग. **यह क्यों सच है कि याजकों की सेवकाई भाषा और जीवन शैली में थी?**

१) **"क्योंकि वह सेनाओं के यहोवा का दूत है।"**

२) एक दूत के पास ऐसी जीवन शैली होनी चाहिए जो परमेश्वर की उपस्थिति में होने पर केंद्रित हो। केवल इसी प्रकार वह संदेश प्राप्त करने में सक्षम होगा (जकर्याह ३:७ पर विचार करें)।

३) एक दूत को संदेश को मौखिक रूप से देना चाहिए (हाग्गै १:१३ पर विचार करें)।

८. पद ८।

क. यहाँ हमें इस खण्ड का मुख्य शब्द ("परन्तु") मिलता है। जिस तरह से यह हुआ करता था, उस पर चिंतन का एक उद्देश्य था। परमेश्वर वास्तविक जो अब असत्य है, के बीच अंतर पर बल देना चाहते हैं। अंतर प्रभावी हैं।

१) कई लोगों को अधर्म से **"फेरने"** के बजाय, याजकों ने स्वयं को मार्ग से **"फेर"** लिया है।

२) याजकों ने अपने मुंह से **"शिक्षा देने"** के बजाय, कई लोगों को अपनी **"शिक्षा"** से ठोकर खिलाई है।

३) लेवी के साथ **"जारी"** वाचा के बजाय, याजकों ने लेवी की वाचा को **"भ्रष्ट"** (या तोड़ा) किया है।

ख. अगले खण्ड में परमेश्वर लोगों के पापों पर ध्यान देना आरम्भ करेंगे। यहाँ, हालाँकि, वह विशेष रूप से याजकों पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं।

टिप्पणियाँ -

ग. **लोगों पर ध्यान केंद्रित करने से पहले परमेश्वर याजकों पर ध्यान क्यों देते हैं?**

१) आगे होने वाली बात का निरीक्षण करना महत्वपूर्ण है। याजकों ने परमेश्वर को ठुकरा दिया है। लोग इससे प्रभावित होते हैं। याजकों के कार्य "कई" लोगों के लिए ठोकर खाने का कारण बनते हैं (हम इसी प्रकार की बात को १:१३ में देख सकते हैं जहाँ याजकों का व्यवहार लोगों को गलत भेंट लाने के लिए प्रभावित करता है)।

२) एक सेवकाई का पतन स्वयं सेवक के पतन से पहले होता है। परमेश्वर पहले याजकों के पाप पर ध्यान केंद्रित करते हैं, क्योंकि लोगों के अगुवों और प्रतिनिधियों के रूप में, उनके पास इस्राएल के पाप के लिए अधिक ज़िम्मेदारी है। (देखें निर्गमन ५:१४ और याकूब ३:१)। किसी व्यक्ति के अगुवे के कार्यों का सीधा प्रभाव उस व्यक्ति पर पड़ता है।

९. पद ९।

क. "इसलिए" शब्द का प्रयोग पहले के पद के परिणाम को प्रस्तुत करने के लिए किया जाता है। यह इस खण्ड के निष्कर्ष को भी दर्शाता है।

ख. **परमेश्वर "भी" शब्द का प्रयोग क्यों करते हैं?**

१) सबसे पहले, हम १:३,४ में याजकों के साथ जो हो रहा है और जो एदोम के साथ हुआ, उसके बीच निरंतरता को देख सकते हैं। हम देख सकते हैं कि दोनों ही मामलों में परमेश्वर कहते हैं, **"मैंने किया है।"** दोनों ही मामलों में, जिन लोगों का न्याय होता है, वे दूसरों द्वारा तुच्छ जाने जाते हैं।

२) दूसरा, हमें अपनी पहले कई हुई बात को याद रखना चाहिए कि हम जो बोते हैं वही काटेंगे। याजकों ने परमेश्वर को तुच्छ जाना (उन्होंने बोया)। लोगों ने याजकों को तुच्छ जाना (उन्होंने काटा)। यदि हम परमेश्वर से अनुग्रह चाहते हैं, तो हमें परमेश्वर को अनुग्रह दर्शाना भी पड़ेगा (मत्ती ७:२)।

ग. निष्कर्ष यह है कि याजक की परमेश्वर से अनुग्रह प्राप्त करने की इच्छा नहीं है ("उसके मार्ग पर चलते हुए")। वे मनुष्यों से अनुग्रह प्राप्त करना चाहते हैं ("पक्षपात दिखाना; जिसे लैव्यव्यवस्था १९:१५ में मना किया गया था)। निःसंदेह, यह उनके साथ चलने के लिए परमेश्वर की इच्छा के सीधे विपरीत है, और उनके मुंह पर कोई अधर्म (पक्षपात) नहीं पाया जाता है।

ख. खण्ड#३ की संरचना की एक रूपरेखा (रूपरेखा का उपयोग करके, छात्रों को भागों के बीच सम्बन्धों की पहचान करने के लिए चुनौती दें)।

१. आज्ञा का विवरण (२:१-३)।

क. प्रस्तावना (पद १)।

ख. शर्तें (पद २क)।

१) वर्तमान वास्तविकता (पद २ ख)।

२) क्या होगा इसका विवरण (पद ३)।

२. आज्ञा का उद्देश्य (पद ४)।

क. उन्हें जगाने के लिए (पद ४ क)।

ख. लेवी के साथ वाचा को बनाये रखने के लिए (पद ४ ख)।

३. वाचा का विवरण (पद ५-७)।

क. सामान्य विवरण (पद ५)।

ख. विशिष्ट विवरण (पद ६)।

ग. इस विवरण के सही होने का कारण (पद ७)।

४. वाचा की अस्वीकृति (पद ८)।

५. परिणाम और निष्कर्ष (पद ९)।

टिप्पणियाँ -

टिप्पणियाँ -

ग. खण्ड #३ का निष्कर्ष।

१. अंतिम बिंदु और विचार।

क. हम परमेश्वर की आशीषों को इस हद तक बनाए रखते हैं क्योंकि हम उसके आज्ञाकारी हैं और उन आशीषों को साझा करते हैं।

ख. परमेश्वर अपने लोगों को इसलिए अनुशासित करते हैं ताकि उनकी योजना (वाचा) बनी रह सके। परमेश्वर के उद्देश्यों को विफल नहीं किया जा सकता (अय्यूब ४२:२)।

ग. शान्ति और जीवन, भाषा और जीवन शैली में परमेश्वर की आज्ञाकारिता का परिणाम है।

घ. परमेश्वर का अनादर करने का अर्थ है कि आपका भी अनादर होगा। पाखंडी अपनी कब्र स्वयं खोदते हैं।

ङ. ईश्वरीय अगुवों का महत्व स्पष्ट है। वे बहुत से लोगों को प्रभावित करते हैं और इसलिए पहले उनका न्याय किया जाता है (याकूब ३:१ पर विचार करें)।

च. इस बात को देखा जाना चाहिए कि यह सब इस तथ्य से सम्बंधित है कि परमेश्वर "सेनाओं का यहोवा" है।

चर्चा विषय

हम मलाकी के संदेश को सेवकाई के संदेश के रूप में कैसे समझा सकते हैं?

छ. आइए हम इस खण्ड को निम्नलिखित आरेख के साथ सारांशित करें।

पद १-४ क	पद ४ ख-७	पद ८,९
बदलने की आज्ञा	बदलने का उदाहरण	अंतर
एक आज्ञा/चेतावनी जिसमें वाचा को बनाये रखने की उसकी इच्छा के कारण परमेश्वर का अनुशासन शामिल है।	परमेश्वर इस बात को प्रतिबिंबित करते हैं कि यह पहले कैसा था और वह चाहते हैं कि यह वैसा ही हो ताकि उसके लोग और राष्ट्र, वाचा के लाभों का आनन्द उठा सकें।	क्या था और क्या है के बीच का अंतर और उसके बहुत महंगे परिणाम।

टिप्पणियाँ -

२. सारांशित वाक्य। जबकि परमेश्वर इस बात को प्रतिबिंबित करते हैं कि चीजें पहले कैसी थीं, पापों को ठीक करने और लेवी के साथ वाचा को बनाये रखने के प्रयास में वह अपने अनुशासन के विषय में चेतावनी देते हैं।

३. शीर्षक - पाखण्ड के विरुद्ध न्याय।

VI. खण्ड#४: लोगों का विश्वासघात और पाखण्ड (मलाकी २:१०-१६)।

क. खण्ड #४ की संरचना का अध्ययन।

१. पद १०।

क. यह पद इस खण्ड के परिचय के रूप में कार्य करता है। हम विभिन्न शब्दों का अवलोकन कर सकते हैं जो इसे एक सामान्य पद के रूप में दर्शाते हैं और जिसका उपयोग अधिक विशिष्ट समस्याओं को दर्शाने के लिए किया जाएगा ("हम," "अपने," "एक ही पिता," "पूर्वजों," "सभी," "एक ही परमेश्वर" पर ध्यान दें)।

ख. इस खण्ड में **"विश्वासघाती"** शब्द को पाँच बार दोहराया गया है।

ग. **"विश्वासघाती" होने का क्या अर्थ है?**

१) इसका अर्थ है धोखेबाज़ होना।

२) इस खण्ड में इसका उपयोग सम्बन्धों में विश्वासघात को दर्शाने के लिए किया जाता है।

घ. **"विश्वासघाती," "अपवित्र," और "वाचा"** शब्दों का दोहराया जाना इस खण्ड के मुख्य विषय की ओर इशारा करता है। दूसरों के प्रति अविश्वास, परमेश्वर और उसकी वाचा के प्रति अविश्वास के समान है। यह परमेश्वर, उसकी वाचा और उसके पवित्रस्थान को अपवित्र करना है। जैसा कि यह पद तर्क देता है, यदि सभी का एक ही पिता है तो एक दूसरे के प्रति विश्वासघात उसकी संतानों के प्रति विश्वासघात के समान है (इस प्रकार, यह परमेश्वर प्रति विश्वासघात है)।

टिप्पणियाँ -

२. पद ११।

क. अब परमेश्वर अधिक विशिष्ट है। **"ने"** शब्द इस बात की व्याख्या की ओर इशारा करता है कि लोग धोखेबाज़ कैसे हो गये हैं।

ख. **लोग धोखेबाज़ और विश्वासघाती कैसे हो गए हैं?**

१) वे दूसरे धर्मों की स्त्रियों से विवाह करते हैं।

२) इस प्रकार के मिश्रित विवाह को वाचा की व्यवस्था में मना किया गया था क्योंकि उन्होंने धर्मत्याग को बढ़ावा दिया (देखें निर्गमन ३४:१५,१६; व्यवस्थाविवरण ७:३,४)। वे वाचा को अपवित्र करते हैं क्योंकि वे पवित्रता को अपवित्रता के साथ मिला रहे हैं।

३. पद १२।

क. **"जो पुरुष ऐसा काम करे"** वाक्य विश्वासघात के परिणाम का परिचय देता है। पद में मुख्य शब्द **"काट डालेगा"** है। इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि **"काट डालेगा"** के लिए इब्री शब्द वही है जो एक वाचा को "काटने/तोड़ने" के विचार को व्यक्त करने के लिए इस्तेमाल किया गया है।

ख. इस प्रकार, जो लोग वाचा को नहीं "तोड़ते/काटते" हैं, उनके लिए अलग प्रकार की कटाई होगी।

१) **"याकूब के तम्बुओं से"** काट दिया जाएगा (समाप्त, नष्ट, बहिष्कृत)।

टिप्पणियाँ -

२) अर्थात्, उन्हें परमेश्वर के लोगों के समुदाय से बहिष्कृत कर दिया जाएगा।

क) इसे ध्यान में रखते हुए हम इब्री मुहावरे को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं **"उसके घर के रक्षक।"** मुहावरे का अर्थ दो बातें हो सकती हैं:

(१) उससे सम्बंधित सभी चीज़ों (उसके परिवार) को काट दिया जाएगा।

(२) वह नागरिक के सभी अधिकारों को खो देगा। यानी व्यवस्था की अदालत में उसका बचाव करने वाला कोई नहीं होगा।

(क) पद का अंतिम भाग तब धार्मिक अधिकारों के नुकसान का संकेत देता है।

(ख) अर्थात्, परमेश्वर को भेंट चढ़ाने वाला कोई नहीं होगा।

ख) परमेश्वर अपने लोगों को अशुद्ध नहीं होने देंगे। वह अंतर्विवाह की अनुमति नहीं देंगे। जैसा कि जब इस्राएल वाचा के देश में आया, तब जो कुछ भी एक मिश्रण था या मिश्रण का कारण बन सकता था उसे नष्ट करना पड़ा (१ कुरिन्थियों ३:१६,१७; २ कुरिन्थियों ६:१४ की समानता पर विचार करें)।

४. पद १३।

क. विपत्तियों की सूची जारी है। सामान्य समस्या को पद १० में बताया गया था। अब परमेश्वर चिंतित होने का अपना दूसरा कारण बताते हैं।

ख. हमें यहाँ मरकुस ७:६-८ के सिद्धांत की याद दिलाई गई है। आज्ञाकारिता के बिना आराधना करना व्यर्थ है। हम कह सकते हैं कि आज्ञाकारिता के बिना पश्चाताप भी व्यर्थ है। परमेश्वर शोक नहीं चाहते हैं (क्योंकि यह केवल "सांसारिक शोक" हो सकता है: कुरिन्थियों ७:९,१० देखें)। परमेश्वर पश्चाताप चाहते हैं। पश्चाताप के बिना आंसू पाखण्ड के आंसू होते हैं।

टिप्पणियाँ -

५. पद १४।

क. इस पद का उपयोग यह समझाने के लिए किया जाता है कि परमेश्वर उनकी भेटों को ग्रहण क्यों नहीं करते ("यहाँ तक कि" शब्द को देखें)।

ख. **परमेश्वर उनकी भेंट को ग्रहण क्यों नहीं करते**?

१) **"क्योंकि"** अविश्वास और वाचा एक साथ नहीं चल सकते। पद १० में परमेश्वर ने इसे सामान्य तरीके से स्पष्ट किया है। अब वह एक विशिष्ट उदाहरण का उपयोग करके इसे स्पष्ट करते हैं।

२) विश्वासयोग्यता की कमी वाचा का मज़ाक उड़ाती है। अंततः, इसे स्वयं परमेश्वर का उपहास करने के रूप में देखा जाता है।

६. पद १५।

क. **"परन्तु"** शब्द एक विपरीत बात का परिचय देता है। यह उन लोगों के बीच का अंतर है जो विश्वासयोग्य हैं (जिनके पास आत्मा का अवशेष है), और जो विश्वासयोग्य नहीं हैं (जिनका पिछले पद में वर्णन किया गया है)।

ख. प्रश्न के भीतर एक निहित कटाक्ष है जो इसके विपरीत है **("और एक ही को क्यों बनाया? इसलिए कि वह परमेश्वर के योग्य संतान चाहता है?)**।" इसका अर्थ यह है कि विश्वासघाती, निश्चय ही, एक परमेश्वर के योग्य संतान चाहता था। लेकिन परमेश्वर के योग्य संतान मिश्रित विवाह से कैसे आ सकती है?

७. पद १६।

क. यहाँ हमारे पास एक कारण के रूप में निष्कर्ष है। परमेश्वर आज्ञा देते हैं कि उसके लोग अपनी पत्नियों के प्रति विश्वासयोग्य रहें। क्यों? **"क्योंकि मैं स्त्री-त्याग से घृणा करता हूँ।"** यही कारण और निष्कर्ष है। परमेश्वर स्त्री-त्याग से घृणा करते हैं। यह "गलत" है (ध्यान दें कि मुहावरा "अपने वस्त्र को ढांपते हैं", किसी दूसरी स्त्री को अपनी पत्नी घोषित करने के कार्य को दर्शाता है: रूत ३:९ देखें)।

ख. इस निष्कर्ष को हम इस अर्थ में भी कह सकते हैं क्योंकि यह इतने बलपूर्वक कहा गया है। ध्यान दें कि **"अपनी आत्मा के विषय में चौकस रहो और विश्वासघात मत करो"** का विचार पद १६ और पद १७ में दोहराया गया है।

टिप्पणियाँ -

ग. **परमेश्वर इस चेतावनी को क्यों दोहराते हैं?**

१) निष्कर्ष पर बल देने और उसे उजागर करने के लिए इसे दोहराया जाता है।

२) **"मैं स्त्री-त्याग से घृणा करता हूँ"** शब्दों को दोहराए जाने वाले कथनों के बीच रखा गया है और इस प्रकार, इस पर बल दिया गया है।

ख. खण्ड #४ की संरचना की एक रूपरेखा (रूपरेखा का उपयोग करके, छात्रों को भागों के बीच सम्बन्धों की पहचान करने के लिए चुनौती दें)।

१. प्रस्तावना: सामान्य समस्या (पद १०)।

२. विशिष्ट समस्याएं (पद ११-१५)।

क. समस्या #१ (पद ११)।

१) समस्या का परिणाम (पद १२)।

ख. समस्या #२ (पद १३)।

१) समस्या का कारण (पद १४)।

ग. समस्या के विपरीत (पद १५ क)।

घ. समस्या से बचने की चेतावनी (पद १५ ख)।

३. निष्कर्ष (पद १६)।

क. परमेश्वर ने जिस बिंदु पर बल दिया (पद १६ क)।

ख. दोहराई गयी चेतावनी (पद १६ ख)।

ग. खण्ड #४ का निष्कर्ष।

१. अंतिम बिंदु और विचार।

क. अविश्वास वाचा का शत्रु है। वाचाओं के प्रति विश्वासयोग्य रहने के विषय में परमेश्वर बहुत गंभीर हैं।

ख. विश्वासी से विवाह न करने से विनाश होता है।

ग. जब वाचा टूटती है तो परमेश्वर तक पहुंच समाप्त हो जाती है।

टिप्पणियाँ -

घ. परमेश्वर स्त्री-त्याग से घृणा करते हैं।

ङ. खण्ड २:१-९ और खण्ड २:१०-१६ को जोड़ने वाला निरंतर विषय, वह तनाव है जो परमेश्वर की इस इच्छा के बीच पाया जाता है कि वाचाएँ ना टूटें और इस्राएल की उन्हें तोड़ने की प्रवृत्ति है।

चर्चा विषय

आपके जीवन में पाए जाने वाली कुछ वाचाएँ कौनसी हैं? क्या आप उन्हें गंभीरता से लेते हैं?

२. सारांशित वाक्य - परमेश्वर लोगों को अविश्वास से दूर रहने और वाचा की ओर मुड़ने के लिए कहते हैं।

३. शीर्षक - वाचा के प्रति अविश्वास।